दोहा (101)

कैसरी कै सरि करौं सकै, बेपरू किनुक प्रभु।

गात-रूप लखि जात हुरि, जातसुख को सुभु॥ १०१॥

(पाठ में कुछ भिन्न रूप मिल सकते हैं, पर भाव यही है।)

प्रसंग

इस दोहे में नायिका की अद्‌वितीय सुंदरता का वर्णन है। कवि कहते हैं कि उसकी शोभा की तुलना किसी से भी नहीं की जा सकती।

शब्दार्थ

- कैसरी - सिंहनी
- सरि करौं सकै - बराबरी कर सके
- बेपरू - बिना रूप वाला/साधारण
- प्रभु - स्वामी/प्रिय
- गात-रूप - शरीर की सुंदरता
- लखि - देखकर
- जात - जाती है
- सुख - आनंद

व्याख्या

कवि कहते हैं–उसकी सुंदरता की बराबरी कौन कर सकता है? जैसे सिंहनी की बराबरी कोई नहीं कर सकता, वैसे ही उसकी शोभा अनुपम है।

उसके शरीर की सुंदरता को देखकर मन हर्ष से भर जाता है और अन्य सभी रूप फीके पड़ जाते हैं। उसकी कांति और आकर्षण ऐसा प्रभाव डालते हैं कि देखने वाला मोहित हो जाता है।

अर्थात् नायिका का सौंदर्य अद्वितीय और अनुपम है, जिसकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती।

कवि कहते हैं कि नायिका के रूप की तुलना किससे की जाए? क्या उसे सिंह के समान कहा जाए? या वैकुण्ठ के प्रभु के समान? वस्तुतः उसके शरीर की शोभा को देखकर शुद्ध सोने का रूप भी फीका पड़ जाता है।

अर्थात् नायिका का सौंदर्य इतना अद्वितीय और दिव्य है कि संसार की श्रेष्ठ से श्रेष्ठ वस्तुएँ भी उसके सामने तुच्छ प्रतीत होती हैं। उसकी कांति के आगे सोने की चमक भी म्लान हो जाती है।

भावार्थ

नायिका की शोभा ऐसी है कि उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। उसका रूप देखकर सब मोहित हो जाते हैं।

काव्य-सौंदर्य

- उपमा अलंकार - नायिका की तुलना सिंहनी से।
- अतिशयोक्ति - उसकी सुंदरता को अनुपम बताना।
- श्रृंगार-रस की प्रधानता।
- संक्षिप्त शब्दों में गहन भाव व्यक्त करने की बिहारी की शैली।
-

दोहा (141)

जपमाला, छापैं तिलक, सरै न एकौ काज।

मन काँचै नाचै वृथा, साँचे रंग न राज॥ १४१॥

प्रसंग

इस दोहे में कवि बाह्य आडंबर और दिखावटी भक्ति पर प्रहार करते हैं। वे कहते हैं कि केवल बाहरी साधनों से सच्ची भक्ति या सफलता नहीं मिलती, जब तक मन शुद्ध न हो।

शब्दार्थ

- जपमाला - माला से जप करना
- छापैं तिलक - माथे पर तिलक लगाना
- सरै न एकौ काज - एक भी काम सिद्ध नहीं होता
- मन काँचै - कच्चा/अस्थिर मन
- नाचै वृथा - व्यर्थ ही चंचल रहता है
- साँचे रंग - सच्चा प्रेम या भक्ति का रंग
- राज - प्रभाव, अधिकार

व्याख्या

कवि कहते हैं कि केवल जपमाला फेरने और तिलक लगाने से कोई काम सिद्ध नहीं होता। यदि मन कच्चा (अस्थिर और अशुद्ध) है, तो वह व्यर्थ ही नाचता रहता है। ऐसे मन पर सच्ची भक्ति या प्रेम का रंग नहीं चढ़ सकता।

अर्थात् बाहरी आडंबर से कुछ नहीं होता; जब तक मन सच्चा और दृढ़ न हो, तब तक ईश्वर-भक्ति या किसी भी कार्य में सफलता संभव नहीं।

अर्थात्- कवि कहते हैं कि यदि मन शुद्ध और दृढ़ नहीं है, तो केवल जपमाला फेरने और माथे पर तिलक लगाने से कोई कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। बाहरी धार्मिक चिह्न केवल दिखावा हैं।

यदि मन कच्चा अर्थात् चंचल, अस्थिर और अशुद्ध है, तो वह व्यर्थ ही इधर-उधर भटकता रहता है। ऐसे मन पर सच्ची भक्ति, प्रेम या सद्गुणों का प्रभाव नहीं पड़ता। जिस प्रकार कच्चे बर्तन पर रंग स्थायी नहीं होता, उसी प्रकार अस्थिर मन पर भक्ति का रंग नहीं चढ़ता।

इस प्रकार कवि का स्पष्ट संदेश है कि सच्ची साधना बाहरी आडंबर से नहीं, बल्कि अंतःकरण की पवित्रता से होती है। मन की सच्चाई ही भक्ति को सार्थक बनाती है।

भावार्थ

सच्ची भक्ति के लिए मन की शुद्धता आवश्यक है। केवल बाहरी दिखावे से कुछ प्राप्त नहीं होता।

काव्य-सौंदर्य

- नीति-परक दोहा - आडंबर-विरोधी संदेश।
- रूपक/प्रतीक - “काँचै मन” (अस्थिर मन), “साँचे रंग” (सच्ची भक्ति)।
- संक्षिप्त शब्दों में गूढ़ शिक्षा देने की बिहारी की विशेषता।

यह दोहा हमें शिक्षा देता है कि सच्ची भक्ति और सफलता के लिए बाहरी आडंबर नहीं, बल्कि मन की पवित्रता और निष्ठा आवश्यक है।